किस्सा बगैर भोजन-पानी के जीवन का

डॉ. सुशील जोशी

पिछले दिनों प्रहलाद जानी अखबारों में छाए रहे। उनका दावा है कि पिछले कई बरसों से (संभवतः 60 बरसों से) उन्होंने न तो भोजन के नाम पर कुछ ग्रहण किया है और न ही पानी पीया है। पूरे मामले को आसानी से नकारा जा सकता था यदि यह सिर्फ उनका दावा होता। मगर रोचक बात यह रही कि अहमदाबाद के स्टर्लिंग अस्पताल में तीस डॉक्टरों के एक दल ने क्लोस सर्किट टीवी की निगरानी में 15-17 दिनों तक उनका निरीक्षण करके इस बात की पुष्टि कर दी कि प्रहलाद जानी एक असामान्य इन्सान हैं। डॉक्टरों के दल ने पिछले 60 सालों के बारे में तो कुछ नहीं कहा मगर इतना ज़रूर बताया कि कम से कम अस्पताल में बिताए गए दिनों में प्रहलाद जानी ने भोजन-पानी बिलकुल भी नहीं लिया। डॉक्टरों ने तमाम किस्म की जांच वगैरह करके बताया कि इस दौरान प्रहलाद जानी की शारीरिक क्रियाओं में कोई गिरावट नज़र नहीं आई। उन्होंने यह भी बताया कि 15-17 दिन की इस अवधि में प्रहलाद जानी ने न तो मल त्याग किया और न ही मूत्र त्याग किया।

स्वयं प्रहलाद जानी की बात करें, तो वे कहते हैं कि काफी छोटी उम्र में ही उनको कुछ दैवीय अनुभव हुआ था जिसके बाद से उन्हें कभी भोजन-पानी की ज़रूरत महसूस नहीं हुई है और न ही उन्होंने कुछ ग्रहण किया है। उनकी इसी बात की जांच के लिए उन्हें स्टर्लिंग अस्पताल में आमंत्रित किया गया था। उन्होंने यह आमंत्रण 'सहर्ष' स्वीकार भी कर लिया था क्योंकि उन्हें लगा कि इस तरह की जांच से अन्य लोगों को लाभ मिल सकता है।

हम जैसे जो लोग 24 घंटे भी भोजन-पानी के बगैर नहीं बिता सकते और जीवन का आधा समय पापी पेट के लिए जुगाड़ करने में बिता देते हैं, उनके लिए यह सचमुच एक बड़ी घटना है। खास तौर से यह तब और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है जब यह कहा जाता है कि यह 'चमत्कार' कोई भी व्यक्ति कर सकता है। मन में कहीं शंका उठती है। क्या यह संभव है?

मनुष्य एक जीवित तंत्र है। किसी भी जीवित तंत्र को स्वयं को जीवित बनाए रखने के लिए न सिर्फ ऊर्जा की बल्कि पदार्थों की भी ज़रूरत होती है। जहां पेड़-पौधे यह ऊर्जा सूर्य के प्रकाश से प्राप्त करके इसे रासायनिक ऊर्जा में बदल सकते हैं, वहीं जंतुओं में यह क्षमता नहीं होती। इसलिए उन्हें तो अपनी ऊर्जा की ज़रूरतों की पूर्ति के लिए रासायनिक ऊर्जा पर निर्भर रहना पड़ता है। जंतुओं में सारी विविधता के बावजूद यह एक बात समान है - सारे जंतु जीवन क्रियाओं के लिए रासायनिक ऊर्जा पर निर्भर हैं। तो प्रहलाद जानी ऊर्जा की पूर्ति कहां से करते हैं?

जिन डॉक्टरों ने उनकी जांच की उनमें से एक, संभवतः टीम के मुखिया ने इस मामले में एक परिकल्पना विकसित की है। उनका कहना है कि अव्वल तो प्रहलाद जानी ने अपनी ऊर्जा की ज़रूरतों को बहुत कम कर लिया है। परिकल्पना का दूसरा हिस्सा कहता है कि इस घटी हुई ऊर्जा की पूर्ति वे सूर्य की ऊर्जा से कर लेते हैं। बुरा न मानें, तो कहूंगा कि यह परिकल्पना कहती है कि प्रहलाद जानी एक अक्षम पौधे में तबदील हो गए हैं। क्या यह संभव है?

जीव जगत में भोजन की प्राप्ति एक महत्वपूर्ण गतिविधि है। विभिन्न जीव (वनस्पतियां, बैक्टीरिया, फफूंदें, जंतु सब) कहीं न कहीं से भोजन की जुगाड़ करते हैं। भोजन की इस जुगाड़ में बहुत विविधता है। जैसे गाय, भैंस, हिरन वगैरह घास, पत्ते खाते हैं। मनुष्य जैसे जीवों को अनाज, दालें, मांस वगैरह चाहिए। बैक्टीरिया जैसे जीव बिलकुल अलग ढंग से ऊर्जा प्राप्त कर लेते हैं। फफूंदें परजीवी होती हैं। मांसाहारी जीवों का काम अनाज से या घास-फूस से नहीं चलता। और सबसे बड़ी बात यह है कि कोई जीव (ऊर्जा के स्रोत व पदार्थों के लिए) जिस तरह के भोजन पर निर्भर होता है, वह यकायक दूसरे तरह के भोजन का उपभोग व उपयोग शुरू नहीं कर सकता। जैसे, हो सकता है कि बहुत

अच्छा हो यदि इन्सान घास-फूस पर जी पाएं मगर यह संभव नहीं है।

और यदि हम बात करें कि जंतु रातों रात उस तरह से अपने भोजन का निर्माण करने लगें जैसे पेड़-पौधे करते हैं तो यह तो और भी असंभव बात होगी। वनस्पतियों और जंतुओं का विकास अतीत में (दसियों करोड़ साल पहले) एक-दूसरे से अलग-अलग दिशाओं में होने लगा था। पोषण प्राप्त करने की दो सर्वथा अलग-अलग विधियां विकसित हुईं। एक हैं स्वपोषी और दूसरे हैं परपोषी। तब से वे शरीर रचना, शरीर की जैव-रासायनिक क्रियाओं (यानी कार्यिकी) वगैरह की दृष्टि से लगातार एक-दूसरे से दूर होते गए हैं। वनस्पतियों में सूर्य की ऊर्जा का उपयोग करने की क्षमता का विकास ही नहीं हुआ बल्कि काफी विविधता भी आई है। इसी प्रकार से प्रकृति में उपलब्ध जैविक पदार्थों (खास तौर से वनस्पतियों द्वारा निर्मित पदार्थों) के उपयोग की क्षमता का विविधीकरण जंतुओं में हुआ है।

उपरोक्त बातों के मद्दे नज़र कतिपय डॉक्टरों की यह परिकल्पना दरअसल ख्याली पुलाव ही लगती है कि प्रहलाद जानी के शरीर में ऐसे परिवर्तन हो गए हैं कि वे सीधे सूर्य की ऊर्जा का उपयोग जीवन क्रियाओं व शरीर के गठन हेतु कर सकें। आश्चर्य की बात है कि ये डॉक्टर इस 'चमत्कार' की चकाचौंध में उन सारी बुनियादी बातों को भूल जाने को तैयार हैं जो उन्होंने अपनी जीव विज्ञान और चिकित्सा विज्ञान की कक्षाओं में सीखी थीं। सूर्य की ऊर्जा का उपयोग जीवन क्रियाओं के लिए करने हेतु उस ऊर्जा को सोखने की व्यवस्था होनी चाहिए। हमारा शरीर सूर्य की ऊर्जा को सोखता तो है मगर उसका असर यह होता है कि शरीर गर्म हो जाता है। उसे रासायनिक ऊर्जा में परिवर्तित करने हेतु विभिन्न एंज़ाइमों व ऊर्जा को ग्रहण करने वाले तंत्रों की उपस्थिति अनिवार्य है। ये सारी व्यवस्थाएं प्रहलाद जानी के शरीर में यकायक तैयार हो गई होंगी, मानना मुश्किल है; असंभव कहें तो भी अतिशयोक्ति न होगी।

जैव विकास की करोड़ों वर्षों की प्रक्रिया में ये व्यवस्थाएं क्रमशः विकसित हुई हैं। प्रत्येक व्यवस्था के विकास के लिए उससे पहले के चरण की व्यवस्थाओं का उपयोग टेम्पलेट की तरह होता है। यानी अचानक किसी जंतु के शरीर में क्लोरोफिल प्रविष्ट करा देने भर से वह कार्बन डाईऑक्साइड और पानी को जोड़कर ग्लूकोज़ नहीं बनाने लगेगा। कई इल्लियां खूब पत्तियां खाती हैं और हरी हो जाती हैं। मगर वे प्रकाश संश्लेषण नहीं करने लगतीं।

इन सब बातों के मद्दे नज़र इस पूरे मामले में शंकाएं पैदा होती हैं। हां, यह ज़रूर कहा जा सकता है कि ऐसे असाधारण मामले सामने आने पर असाधारण परिकल्पनाओं की ज़रूरत होती है और हमें लकीर के फकीर नहीं बने रहना चाहिए। मगर यहां दो बातें स्पष्ट करना ज़रूरी है। एक तो कोई भी परिकल्पना संभव की श्रेणी में होना चाहिए। यानी हम ऐसी परिकल्पनाएं नहीं उछाल सकते जो हमारे सारे वर्तमान ज्ञान व अनुभवों के सर्वथा विपरीत जाती हों। दूसरा इन परिकल्पनाओं और इनके समर्थन में जुटाए गए प्रमाणों पर विचार-विमर्श का सही स्थान शोध पत्रिकाएं हैं, इंटरनेट नहीं।

लिहाज़ा मैं इस बारे में इतना ही कहना चाहूंगा कि जहां प्रहलाद जानी का उदाहरण 'असाधारण' सवाल उठाता है, वहीं पूरी जांच किए बगैर यह कहना उचित नहीं होगा कि पोषण, कार्यिकी वगैरह के बारे में अपनी सारी धारणाओं को तिलांजलि देने का वक्त आ गया है।

मेरे दिमाग में कुछ साधारण से सवाल आते हैं। जैसे, यह कहा गया कि स्टर्लिंग हॉस्पिटल में बिताए 15-17 दिनों में प्रहलाद जानी ने न तो मूत्र त्याग किया न मल त्याग। तो क्या यह माना जाए कि उनकी शरीर क्रियाओं के दौरान कोई ऐसे पदार्थ नहीं बनते जिन्हें शरीर से बाहर निकालना ज़रूरी हो। यह दलील दी जा सकती है कि वनस्पतियों में भी तो मल त्याग नहीं होता। मगर इस संदर्भ में तथ्य यह है कि वनस्पतियों में उत्सर्जन की क्रिया को एक अलग रूप दिया गया है जिसे संग्रह उत्सर्जन (स्टोरेज एक्सक्रीशन) कहते हैं अर्थात उनके उत्सर्जी पदार्थों को विशेष स्थानों पर संग्रहित किया जाता है।

इसी प्रकार से एक सवाल यह भी है कि प्रहलाद जानी को पसीना आता है या नहीं। यदि नहीं आता तो उनके शरीर में ताप नियंत्रण की क्या व्यवस्था है? और यदि आता

है तो पसीने में पानी निकलता होगा, उस पानी की पूर्ति कैसे होती है? और पसीने में सिर्फ पानी नहीं, लवणों का भी ह्रास होता है। इन लवणों की क्षतिपूर्ति कहां से होती है। मान लिया कि वे पौधों की तरह कार्बन डाईऑक्साइड और हवा में उपस्थित जल वाष्प की मदद से कार्बनिक अणु बना लेते हैं मगर लवणों की पूर्ति कहां से होती है। क्या उनका शरीर कार्बन से कैल्शियम, सोडियम, पोटेशियम वगैरह भी बना लेता है?

यह भी सुनने में आया है कि रेशनलिस्ट एसोसिएशन ने अनुरोध किया था कि उक्त प्रयोग करते समय उनके एक प्रतिनिधि को उपस्थित रहने की अनुमति दी जाए। यह अनुमति नहीं दी गई थी। चूंकि यह एक असाधारण स्थिति थी, इसलिए बेहतर होता कि इसे सिर्फ डॉक्टरों के भरोसे न छोड़कर अन्य लोगों को भी शामिल किया जाता, जिन्हें अतीत में ऐसे मामलों के अन्वेषण का काफी अनुभव है।

पूरे मामले में चिंताजनक बात यह है कि इसमें रक्षा अनुसंधान संगठन की प्रयोगशाला के वैज्ञानिक भी शामिल थे। उनके शामिल होने पर तो आपत्ति जैसी कोई बात नहीं है मगर इस बात पर ज़रूर आपत्ति है कि वे सोच रहे हैं कि यह प्रयोग उन्हें कठिन परिस्थिति में फंसे फौजियों के पोषण की व्यवस्था करने में मदद करेगा। यह विचार भी आया है कि प्राकृतिक आपदा ग्रस्त लोगों (जैसे बाढ़ की चपेट में आए लोगों) के लिए भी भोजन पानी की व्यवस्था करने का रास्ता इस प्रयोग में से निकल सकता है। गनीमत सिर्फ इतनी है कि इसे किसी ने राशन दुकान का विकल्प नहीं बताया है। ***(स्रोत फीचर्स)***